IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भक्ति आन्दोलनः मध्यकालीन राष्ट्रीय अन्तः कवच

डा0 वीरेन्द्र प्रताप शाही

मध्यकालीन घटना जिसने समूचे राष्ट्र को उद्वेलित किया और एक सूत्र में बांधने का कार्य किया वह भक्ति–आन्दोलन है। इस भक्ति आन्दोलन को और स्पष्ट रूप में कहें तो एक ऐसा राष्ट्रीय आन्दोलन जो समूचे राष्ट्र को जागरित करने का कार्य किया; एकता का सन्देश दिया। इसने मनुष्य की श्रेष्ठता के साथ ही जो प्रमुख कार्य किया कि हर मानव समान है क्योंकि वह एक ही ईश्वर की सन्तान है। कोटिशः राष्ट्रीय जन में वर्ण, वर्ग, जाति, सम्प्रदाय धर्म आदि के भेद को समाप्त करने का कार्य किया। और एक रूपता के साथ बन्धुता की समानता और स्वतन्त्रता की समानता, जीवन की समानता, आदि समानताओं को राष्ट्र के सम्मुख प्रत्यक्षतः प्रकट किया। मानव मात्र की एकता और समानता की ऋग्वैदिक भावना की स्पष्ट झलक यहाँ मिलती है।

सड़गच्छध्वं संवद्ध्वं संवोमनांसि जानताम्!

देवा भागे यथा पूर्वे संजानानां उपासते।। 1

साथ–साथ और एक दूसरे के मन को जानतेहुये भक्ति–आन्दोलन ने मानव मात्र को समान मानकरसबके साथ सद्व्यवहार करने तथा सबको प्रगति का सुअवसर प्रदान करने का मार्ग प्रशस्त किया। भक्ति आन्दोलन की यह घोषणा कि ईश्वरएक है और सर्वव्यापक है तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों में अमृत की तरह कार्य किया। नामदेव ने स्पष्टतः कहा है–

''एक अनेक विआकन पूरन जत देखउ तत सोई। 2

यह एक सामान्य बात नहीं थी, इस घोषणा ने सामयिक समाज में जो खण्डित था, एकता का, सबके एक समान होने का भाव जन–जन में भरना शुरू कर दिया। जत देखऊ तत सोई अर्थात सब जगह वही एक ही दिखना। यह वह सूत्र था जो था तो धार्मिक आवरण में किन्तु प्रतिफलित हुआ सामाजिक–और सांस्कृतिक रूप से। यह सत्य है किनामदेव सगुण और निर्गुण दोनों के उपासक रहें हैं अर्थात रूप की बाह्य भिन्नता भी हमें और हमारी अन्तः समानता को विभिन्न नहीं कर सकती । यह वह मन्त्र था, सूत्र था जिसने कठिन और विकट परिस्थितियों में चाँहे सूरदास का मलेच्छाक्रान्त भारत हो, (तुलसी का कलिकाल की दुर्धर्षता हो, कबीर की अक्खड़ता या मीरा की स्वतन्त्रता पूरे राष्ट्र के लिये एक अन्तः कवच बना। वह अन्तः कवच जिसने भारत को विभिन्न जातिगत, धर्मगत, सम्प्रदायगत , भाषा और क्षेत्रगत भेदों के उपरान्त एकत्व के बन्धन में समूचे राष्ट्र को सुरक्षित रखा और अपने विभिन्न रूपों के प्रकटीकरण से उसकी आत्मा को मरने नहीं दिया।

शिवकुमार मिश्र इस का समर्थन करते है और कहते है ''भले ही धर्म और भक्ति के क्षेत्र में ही सही किन्तु सामाजिक जीवन के बीच पहली बार धर्म, वर्ण , जाति , नस्ल, धर्म और सम्प्रदाय के भेदों तथा बंधनों को अमान्य करते हुए मानव हृदय के एकात्म तथा भक्ति के सन्दर्भ में मानव – मात्र की समानता को रेखांकित किया गया।'' 3

''माता भूमि पुत्रो·हमं पृथ्वियाः'' की भावना माता के रूप में पृथ्वी अर्थात मातृभूमि/जन्मभूमि से जुड़ती है। यह इस बात को सिद्ध करती है कि यदि यह भूमि हमारी जननी है तो इस भूमि पर निवास करने वाले मानव एक ही माँ की सन्तान है और उनमें कोई भेद नहीं है। भेद केवल बाह्य और आडम्बर जन्य है। साथ ही यह कर्त्तव्य भी इससे प्रतिध्वनित होता है कि इसकी रक्षा करना और इसकी समृद्धि भी पुत्रों के लिये मर्यादा है। इस हेतु भक्ति–आन्दोलन ने जो दूसरा सूत्र दिया वह था मानव – मात्र की श्रेष्ठता। श्रेष्ठता कीभावना का उद्‌बोधन इस आन्दोलन का प्रमुख सूत्र था। इस सूत्र का उत्स राष्ट्र ही था जो पृथ्वी का सांस्कृतिक स्वरूप है। प्रायः सभी भक्त – सन्त कवियों की वाणी ने इस सूत्र को अपनी – अपनी भाषा में खूब गया। श्रेष्ठता और असमानता पर कबीरदास ने स्पष्ट यह दिया।

एक बूंद एक मल–मूतर एक चाम एक गूदा।

एक जोति तै सब ऊपजा, कौन बामन कौन सूदा।। 4

श्रेष्ठता का भाव जो मध्यकालीन समय में जन्मना हो गई थी वह निराधार थी। प्रारम्भिक वर्ण–व्यवस्था जो कर्मो के आधार पर बनी थी वह उतनी जटिल दुरूह तब नहीं थी जितनी अब हो गई थी। ''ऋग्वेद में वर्णित तीन वर्ण परस्पर मिलजुल कर रहते थे। इतिहास में वर्ण–परिवर्तन प्राचीन परम्परा सा ही है, जैसे व्यास (महाभारत) की माता धीवर थी, पराशर भुनि की माता चांडाल थी, शुक देव शुकी से जन्मे तथा वशिष्ठ मुनि गणिका के गर्भ में पले। असुर कन्या देवकी और क्षत्रिय युवक वसुदेव की संतान कृष्ण है, शुक्रचार्य की कन्या देवयानी का पाणिग्रहण क्षत्रिय राजा ययाति से हुआ। 5

भक्ति आन्दोलन ने राष्ट्रीय सन्तुलन की सामाजिकता को बनाये रखने का काम किया। इसने बहुत सारी वर्जनाओं को तोड़ा और विभेदकारी परम्परा पर कठोर आघात किया।

भक्ति आन्दोलन ने अगला प्रमुख कार्य किया कि सभी मनुष्य ईश्वर की उपसना कर सकतें है। मोक्ष की प्राप्ति कर सकतें हैं। आन्दोलन ने मनुष्य को केन्द्र में रखा। इसने मनुष्य में ही ब्रह्म की स्थिति का चित्रण किया। ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति होने पर मनुश्य ब्रह्म ही हो जाता है

ब्रह्मवित ब्रहमैवभवति। उपनिषद के 'तत्वमसि अथवा सोऽहं' भाव का यही रहस्य है। 6

तुं तुं करता तूं भया मुझमें रही न हूँ।

बारीफेरी बलि गई जित देखी तित तूं।। 7

प्रत्येक मनुष्य को इस बात का बोध हुआ कि शरीर के अन्दर और बाहर एक ही तत्व है हर व्यक्ति उसी एक ही परमतत्व की निर्मिति है। अर्थात प्रत्येक मनुष्य समान है और इस देह के अनन्तर उसी परमतत्व को प्राप्त होने वाला है। इसमें कोई भी विभेद नहीं है।

जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी ।

फूटा कुम्भ जल जलहि समाना यह तथ् कह्यों गियानी।। 8

मध्यकालीन भारत में अभारतीय आक्रमण नें भारत की राजनीतिक दिशा और दशा दोनों को बदल दिया। ''अरबों का भारत से व्यापारिक सम्बन्ध पुराना था लेकिन खलीफा उमर के समय में उन्होंने बम्बई के निकट थाना नामक स्थान पर आक्रमण किया। कई प्रयत्नों के बाद अरबों ने आठवी शदी में मकरान (आधुनिक बलूचिस्तान) को जीतने में सफलता पाई।'' 9

''इसी तरह रावर के युद्ध में कासिम ने दाहिर को परास्त कर दिया जो वहां का हिन्दू शासक था।''

10

युद्ध के समय दाहिर के राज्य में सामाजिक और जातिगत आधार पर विद्रोह भी हुये जिसका लाभ मुस्लिम आक्रमण कारियों ने उठाया और दाहिर पराजित हुआ।
''अरबों के आक्रमण के समय सामाजिक रूप से सिन्ध भी विभिन्न जातियों में बंटा था। जिनमें आपस में खाना–पान और विवाह सम्बन्ध नहीं थे।'' 11
''दाहिर का शासन निम्न – वर्ग और मुख्यतया वहां की लड़ाकू जाट–जाति के प्रति असहिष्णुता का था। इस कारण आन्तरिक संघर्ष और असन्तोष से व्याप्त सिन्ध का राज्य दुर्बल हो गया था।''

12

इस प्रकार विभिन्न वर्गो और जातियों में बंटा भारतीय समाज अचानक इस तरह के आक्रमण का सामना पूरी शक्ति के साथ नहीं कर सका। क्योंकि राष्ट्र की भावना को यहाँ दूसरे पायदान पर रखा गया। राजनीतिक सत्ता को प्रमुखता दी गई किन्तु उसे मजबूती देने वाली सामाजिक समरसता का ध्यान नहीं रखा गया। परिणामतः परलोक की चिन्ता में डूबी रहने वाली जनता के हाथ निराशा ही लगा। अब वे राजनीतिक रूप से बिखर चुके थे और अधिक से अधिक सूबेदार ही रह गये। वे कोई ऐसा निर्णय नहीं ले सकते थे जो सार्वभौमिक रूप से राष्ट्रीय अस्मिता और संस्कृति को प्रभावित कर सके। दूसरी तरफ एकेश्वरवाद की धारणा के साथ सामाजिक समानता के सिद्धान्त पर इस्लाम मजबूती के साथ उभरा । खान–पान शादी – सम्बन्ध और भाई चारे में अभेद ने उसके सामाजिक ढांचे को अन्दर से इतना सख्त कर दिया किवह तब तक नहीं बिखर सकता था जब तक कि उनके सामाजिक ताने बाने में भेदन हो सके।

निष्कर्षतः जाति प्रथा पूर्ण प्रभावशाली स्थिति में थी –''ज्यों दरखत के पात, पात में पात त्यों हिन्दू की जात , जात में जात।'' 13

ऐसी परिस्थितियों में भक्ति आन्दोलन और भक्ति की धारणा ने भारतीय जन के मानस में एक रोमांच भर दिया। उसने स्पष्टतः घोषणा की एकेश्वरबाद की। भाँति – भाँति के देवताओं और देवियों के स्थान पर सिर्फ एक ही ईश्वर की धारणा ने समाज में एकत्व का भाव उत्पन्न किया।

तुलसीदास ने तो यहां तक कह दिया कि–

सगुनहिं अगुनहि नहिं कछु भेदा, गावहिं मुनि पुराण बुद्ध वेदा।। 14

इसी एकेश्वरवाद को सन्तों ने वाणी दी और खूब वाणी दी।

क्योंकि सामाजिक समानता का भाव बहुदेववादी विभेद को समाप्त करके ही स्थापित किया जा सकता था।

निर्गुण सगुण दुहुन से न्यारा।

सत स्वरूप होहि विमल सुधारा।। 15

जातीयता जो राष्ट्रीयता का पर्याय है वह अपने–अपने देवता और पूजा–पद्धतियों में बंटा था। जिसका पुरजोर विरोध सन्तों ने किया और पुनः जातीयता को सच्चे अर्थ में स्थापित करने हेतु राष्ट्रीयता का भाव भक्तिआन्दोलन के माध्यम से जागरित किया।

कोई जाति न पूछे, हरि को भजे सो ऊँचा है।

कोटि कुलीन होई ब्रह्मा सम सो भी उनसे नीचा है।। 16

सच्चा गुरू ही राष्ट्र की मजबूत नींव रख सकता है, वह जो व्यापक विचारवाला हो

कबीर गुरू गरवा मिला रलि गया आटें खूण।

जाति पांति कुल सब मिले नांव धरोगे कौण।। 17

रज्जब तो यहां तक कहते है कि कोई पक्ष विशेष को अपना कर पार नहीं पहुंच सकता। ना हिन्दु ना तुर्क। सम्मिलित रूप ही राष्ट्र को मजबूती दे सकता है।

हेत न करि हिन्दू धरम तजि तुरकी रस रीति।

रज्जब जिन पैदा किया, तौही सूं कर प्रीति।। 18

निष्कर्षतः भक्ति आन्दोलन ने मनुष्य मात्र की श्रेष्ठता समानता और एकता के सूत्र बिन्दु के आधार पर राष्ट्रीयता की उस भावना को बलवती करने को प्रयास किया जो सामाजिक ताने – बाने की टूटती कड़ियों को जोड़ता है। एक ऐसे सुरक्षित सांचे का निर्माण करने का प्रयास किया जो

आन्तरिक रूप से समाज को एक होने का आभास कराता है। स्पष्टतः भक्ति आन्दोलन राष्ट्रीय एकता, अखण्डता और अक्षुणता केलिये एक अन्तः कवच के रूप में अपनी भूमिका को सिद्ध करता है।यह आज भी अपने उसी अर्थ में प्रासंगिक है बल्कि और गहरे अर्थ में जहाँ सत्ता के केन्द्रबिन्दु में विभेदकारी मुद्दे दिन–प्रतिदिन जनता को बाँट रहे हैं वहाँ भक्ति– आन्दोलन की षिक्षायें मानव–कल्याण और दुःख को हरने वाली सुधा–रूप सिद्ध हो सकती है।

स्रोत

1. ऋग्वेद /अध्याय 36/मंत्र/181 – गीताप्रेस गोरखपुर
2. सन्त नाम देव की पदावली – पद – 50
3. भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य शिवकुमार मिश्र लोक प्रकाशन संस्करण, 2012
4. कबीर ग्रन्थावली, सम्पादक– श्यामसुन्दर दास –पृ0 41 प्रकाशन परिवार सं0 – 2008
5. हिन्दी अनुशीलन, कबीर विशषांक– भारतीय हिन्दी परिषद, इलाहाबाद
6. कबीर ग्रन्थावली–श्यामसुन्दर दास पृ0 – 32
7. वही
8. कबीर ग्रन्थावली– श्यामसुन्दर दास
9. मध्यकालीन भारत– एल0पी0 शर्मा,21 वाँ संशो0 सं0 – 2005 , लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्र0 पृ0– 31–32
10. वही पृ0– 33
11. वही पृ0– 31
12. वही पृ0– 31
13. मध्यकालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति – शिव कुमार गुप्त – 18 प्र0 – पंचशील प्र0
14. रामचरित मानस, बालकाण्ड, तुलसीदास गीता प्रेस, गोरखपुर
15. दरिया सागर पृ0 14 विल्वेडियर प्रेस प्रयाग
16. पलटू साहिब की बानी भाग – 3, पृ0 50 पद 102 प्र0 विल्वेडियर प्रेस प्रयाग
17. कबीर ग्रन्थावली गुरूदेव अंग श्यामसुन्दर दास पृ0 21
18. सन्त सुधासार संपा0– वियोगी हरि पृ0 530–57 प्र0 सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली